Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 19, Issue No. 5, October-2022, ISSN 2230-7540

नागार्जुन के लोक कथा साहित्य में जीवन तत्व एवं लोक परम्परा का अध्ययन

अंजलि श्योकंद*

Email - sehwaganjali@gmail.com

सार *- नागार्जुन के कथा साहित्य में लोकतत्व जैसे विषय का वर्णन अत्यन्त ही विस्ततृ है। जिसमें कहीं उनकी लोक चेतना है जो मजदूर एंव सर्वहारा वर्ण के संघर्ष के साथ दिखाई पड़ती है तो कहीं साधारण लोगों की निष्ठा , ईमानदारी और लगन के प्रतीक रूप मे नागार्जुन का लोक जीवन उनकी रचनाओं में कुलीन किन्तु दरिद्र ब्राहमण , जमींदार, मजदूर, मछुआरों और विधवाओं के जीवन के रूप में चित्रित हुआ है जिसमें उनका सामाजिक परिवेश भी समाहित है। लोकतत्व के अधीन नागार्जुन ने लोक प्रकृति की भी चर्चा की है जिसमें मिथिला की माटी की सुगंध है तो धान और सरसों की लहलहाती फसल थी, पोखर और मैदान है तो बाँस की झुरमुट और आम के बगीचे भी कुल मिलाकर प्राकृतिक सौन्दर्य की बेमिशाल तस्वीर है। लोक भाषा एवं लोक साहित्य के अन्तर्गत नागार्जुन ने ग्ारमीण अंचल के अनुरूप अपनी सशक्त भाषा एवं साहितय का परिचय दिया है। नागार्जुन ने अपनी कथाओं के सहारे लोक संस्कृति का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करते हुए खान-पान संबंधी विवरण देकर अपनी रचनाओं के लोकतत्व के समस्त गुणों से संम्पृक्त किया है।*

मुख्यशब्द *- नागार्जुन, कथा साहित्य, लोक सरोकार*

---------------------------------X---------------------------------

प्रस्तावना

किसी भी साहित्य अथवा संस्कृति में उपस्थित लोकतत्व का अध्ययन उसके विभिन्न तत्वों के आधार पर किया जाता है, किन्तु उससे पूर्व ‘लोक- और लोकतत्व को समझना अत्यन्त आवश्यक है। डॉ 0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ’ के अनुसार, ‘‘लोक शब्द उन लोगों का सूचक है जिनके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं है। ये लोग नगर के परिष्कृत, रूचिसम्पन्न, सुसंस्कृत, समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रूचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएं आवश्यक होती है, उनको उत्पन्न करते हैं। ’’(जनपद, खण्ड 1 अंक 1 अक्टू01952) डॉ0 रवीन्द्र भ्रमर के शब्दों में ‘‘साहित्य अथवा संस्कृति के लिए एक विशिष्ट भेद की ओर इंगित करने वाले एक आधुनिक विशेषण के रूप में इस (लोक) शब्द का अर्थ ग्राम्य या जनपदीय समझा जाता है , किन्तु इस दृष्टि से केवल गांवों में ही नहरीं वरन् नगरों , जंगलों, पहाड़ों और टापुओं में बसा हुआ मानव समाज जो अपने परम्पराप्रथित रीति-रिवाजों और आदिम विश्वासों के प्रति आस्थाशील होने के कारण अशिक्षित एंव असभ्य कहा जाता है, लोक का प्रतिनिधित्व करता है। ’’(भ्रमर,1965 पृ0 3)

उपर्युक्त मान्यताओं के आधार पर कहा जा सकता है कि मूलभूत मानवीय संस्कार व मनोवृत्तियाँ तथा आदिम विश्वासों के रूप में लोकतत्व पीढी ’ दर पीढी उत्तराधिकार के रूप में मनुष्य को प्राप्त होता है। लोक तत्व मानव जीवन के उन भावों , विचारों आदि का प्रतिनिधित्व करता है। जो मानव प्रकृति के लिये सहज , सरल और अकृतम हो। संक्षेप में लोकतत्व से तात्पर्य मनुष्य के वे अति प्राचीन संस्कार, धार्मिक परम्पराएं, सामाजिक रीतिरिवाज, नैतिक मान्यताएं एवं सामूहिक विश्वास इत्यादि है।

लोक चेतना

नागार्जुन लोक चेतना सम्पन्न हिन्दी कथाकारों की परम्परा के अग्रणी लेखकों में है। एक प्रकार से प्रेमचन्द की परम्परा में उन्होंने अपनी यर्थाथवादी औपन्यासिक पद्धति का विकास किया है। नागार्जुन यदि यथार्थ-चित्रण की वास्तविक दिशा पहचान सके तो उसका प्रमुख कारण

यह था कि उन्हें अपने परिवेश की अंतरंग वास्तविकता की प्रामाणिक जानकारी थी और साथ ही सामाजिक जीवनमें घटित हो रहे परिवर्तनों को समझने की दृष्टि भी। ''नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्रामीण समाज सामंतवादी प्रभाव की गिरफ्त में है। इसीलिए समाज की उपेक्षित इकाइयाँ एक दिन सचेत होती है , संगठित होती हैं और वही परिवर्तन की प्रक्रिया में सबसे आगे जाती हैं। नागार्जुन के उपन्यसों का समाजशास्त्र अपने गहरे अर्थ में निम्नवर्गीय जनता की समस्याओं को उनके द्वारा संगठित होकर सके प्रतिरोध करने के विभिन्न तरीकों से जुड़ा हुआ है। नागार्जुन अपने आलोचनात्मक विवेक से सभी उपेक्षित जातियों को उसी किसान-मजदूर वर्ग से जोड़ते हें जो सर्वहारा का वास्तविक रूप में प्रतिनिधित्व कर सके।''(राय,पृ0109)

नागार्जुन की लोक चेतना का एक उदाहरण यहाँ 'बाबा बटेसर नाथ' से उद्धृत है , जिसमें बाबा बटेरनाथ व्यंग्य से विक्टोरिया को 'राज राजेश्वरी' महारानी विक्टोरिया कहते हैं। वैसे उसकी सही संज्ञा 'बनियों की रानी ' उन्हें मालूम है। उनकी लोक वत्सलता का स्वरूप भी देखने लायक है , ''हुआ यही कि डण्डीमारों ने बटखरे का वजन अपने हक में बढ़ा लिया। यानी हमारे इलाकों में सरकार ने रेल चलायी तो उसके अन्दर जनता के हित की कोई भावना ही न थी। भावनाभी एकमात्र यह कि उसके अपने लाडले सौदागर कच्चा माल आसानी से ढो ले जा सके और 'शुभ-लाभ' की अपनी सड़कों को चौगुना लम्बा-चौड़ा कर लें। ''(वटेसरनाथ, पृ061)

लोक जीवन

''लोक जीवन के सहज-चित्रण की दृष्टि से नागार्जुन के उपन्यास सम्पूर्ण कथा-साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। मुंशी प्रेमचन्द के बाद जीवन-चित्रण की यह पैठ या तो 'रेणु' में मिलती है, या फिर नागार्जुन में। मिथिला के प्रति नागार्जुन का विशेष लगाव है। वहाँ के जन-जीवन की झाँकी को सही अर्थो में चित्रित करने का सबसे बड़ा श्रेय नागार्जुन को मिला है। नागार्जुन ने मिथिला की धरती के विविध आयामों को ग्रामीण अंचल के परिवेश से देखने का प्रयास किया है। नागार्जुन के अपने साहित्य में गाँव-देश की धरती, वातावरण, पेड़-पौधे, रीति-रिवाज, बोल-चाल सबसे उनका रिश्ता निकट का है। बाहर से जितने क्षीण वे दिखायी देते हैं भीतर से उतने ही उत्कृष्ठ भाव सम्पन्न हैं। उनकी ऊँचाइयाँ देखनी हो तो ग्रामीण अँचल की अतल गहराइयों में उतरना होगा। मिथिला की प्रत्येक पीड़ा की नागार्जुन माँ की गोद की तरह थाम लेते हैं।''(राय,पृ094) नागार्जुन का मिथिला की माटी से विशेष लगाव है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में मिथिला के ग्राम जीवन की अत्यन्त प्रामाणिक तस्वीर पेश की है। ''वहाँ के कुलीन किन्तु दरिद्र ब्राहम्मण, भारी भरकम जमींदार-तालुकेदार, कमकर, मजदूर, मछुआरे, विधवाएं, सौरठ का विवाह मेला , गंवई संस्कृत पाठशालाएं , स्थानीय कांग्रेसी नेता, उभरते हुए नवजवान , कामरेड, छोटी मझोली जातियाँ , उनके अपने सुख-दुख , तीज-त्यौहार, गाना-नाच सब उनके उपन्यासों में उपलब्ध हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त मिथिलांचन की हरियाली , आम, लीची के बगीचे , ताल-मखाने वाले ताल , किसिम-किसिम की मछलियाँ , चिउड़ा दही क्या नहीं है वहाँ? बाम दिशा और साम्यवाद की सैद्धान्तिक बहस में उलझने वालों की पूरी की पूरी जमात हमारे चारों ओर फैली हुई है। किन्तु साधारण जनता को मूल मुद्दे तक लाने की उसे कोई परवाह नहीं है।''(वही,पृ094)

नागार्जुन ने अपने 'कुंभीपाक' उपन्यास में जहाँ एक ओर समाज में आयी चारित्रिक गिरवाट व नारी-पुरूष के बीच अनैतिक संबंधों की बात कही है तो दूसरी ओर 'दुःखमोचन' में गुटबन्दी, वर्ग-संघर्ष, सामाजिक असमानता, अन्याय तथा पूँजीवाद जैसे दोषपूर्ण लोक समस्याओं का चित्रांकन है। 'पारों' में जहाँ अनमेल विवाह की समस्या है तो 'उग्रतारा' में विधवा स्त्री की जीवन की कठिनाइयों का अंकन। इसके साथ ही नागार्जुन के उपन्यासों में कहीं सत्ता-दलालों की बात है तो कही अभिजात्य वर्ग की झूठी शानो-शौकत, कहीं गरीबी-लाचारी है तो कहीं जमींदारी शोषण। कहीं परिवार चलाने की समस्या तो कहीं भ्रष्टाचार और कानूनी विसंगतियों का पोषण। कहने का तात्पर्य है कि नागार्जुन ने अपनी कथा ओं में समाज के विशद वर्णन और यथार्थ चित्रण के सहारे लोक जीवन की अद्भुत झाँकी प्रस्तुत की है।

लोक प्रकृति

''नागार्जुन के उपन्यासों में मिथिला का प्राकृतिक सौन्दर्य पूर्ण समग्रता के साथ चित्रित हुआ है। मिथलांचन का सौन्दर्य नागार्जुन को इतना अधिक प्रिय है कि प्रवासी के रूप में भी वहाँ के ताल-तलैया , आम-लीचिचों, बरगद-तालमखाना आदि के साथ ही साथ चन्द्रमा का शीतल भव्य प्रकाश तथा खेतों की हरियाली आदि का स्मरण कर कवि हृदय बेचैन हो उठता है और इसी बेचैनी के कारण नागार्जुन के उपन्यासों में भी प्राकृतिक सौन्दर्य उभरकर सामने आया है।''(वही, पृ0114,115)

www.ignited.in

लोक भाषा

नागार्जुन की काव्यभाषा की तरह ही उनकी कथाभाषा भी लोक से जुड़ी हुई , बहुआयामी भाषा है। साहित्यकार की कल्पनाशीलता, सर्जनात्मक क्षमता, उसकी भाषाई ताकत और मानवीय अनुभूतियों की गहरी समझ उसकी कृति को अमरत्व प्रदान करती है। भाषा रचनाकर की असली ताकत है। नागार्जुन की भाषा पर बहुत गहरी पकड़ है। चाहे उनकी कृति 'नई पौध ' हो, वरूण के बेटे , 'बाबा बटेसरनाथ ' बलचनमा, 'रतिनाथ की चाची' या फिर उनकी कहानियाँ हरेक में भाषा के वही तेवर नजर आते हैं।''रेणु की तरह नागार्जुन के उपन्यास भी आंचलिकता के गहरे रंगों में रंगे हुए हैं। लोकभाषा की गहरी समझ उनके कथ्य को सहन और सम्प्रेषणीय बनाती है। उनके उपन्यासों के ग्रामीण पात्रों से जब हमारा साक्षात्कार होता है तो लगने लगता है कि हम गांव की चौपाल में बैठे खेतिहर किसानों और मजदूरों से बातें कर रहे है। यह नागार्जुन के भाषा की ही करामात है कि उपन्यास पढ़ते-पढ़ते पाठक गांव के खेतों , खलिहानों, पगडण्डियों, गलियों में विचरण करने लगता है और ग्रामीण लोगों के दुख-दर्द का साक्षी बन जाता है। ऐसा इसलिए हो पाता है, क्योंकि नागार्जुन की भाषा मे ंऐसी सामर्थ्य है कि वह पाठक को वहां ले जा सके।''(श्रीवास्तव , पृ082)

लोक साहित्य

मिथिला के ग्रामीण परिवेश से जुड़े होने के कारण नागार्जुन ने अपनी कथाओं में लोक साहित्य को काफी महत्व दिया है। ''लोक साहित्य के विभिन्न रूप , यथा-धर्म गाथाएं, लोक कहानियाँ, गीत, लोरियां आदि सभी के प्रति नागार्जुन की विशेष दिलचस्पी रही है। यद्यपि नागार्जुन मुख्यतः जन-समस्याओं को उभारने वाले रचनाकार हैं, तथापि उनक ध्यान लोक-साहित्य के विविध पक्षों की ओर भी गया है। ''(वही पृ068,69) उनका यह प्रयोग यत्र-तत्र उनके उपन्यासों और कहानियों में देखा जा सकता है , जिससे नागार्जुन द्वारा चित्रित परिवेश की सघनता और विश्वसनीय हो जाती है।

''नागार्जुन के उपन्यासों में यद्यपि यत्र-तत्र परिवेश की आवश्यकतानुसार ही लोकगीतों का प्रयोग हुआ है , तथापि ये मिथिलांचल की संस्कृति को प्रकाशित करने के लिए पर्याप्त हैं। इन गीतों में जहाँ स्थान विशेष की महक है , वहीं इनका माधुर्य सहृदय पाठक को रसासिक्त करने में सफल भी है। ये लोकगीत मिथिला की संस्कृति और जन भावनाओं को प्रतिबिम्बित करते हैं।''(राय,पृ0122)

लोक परम्परा और अंधविश्वास

''नागार्जुन के उपन्यासों में मिथिला के ग्रामीण जन-जीवन में प्रचलित लोक-विश्वासों एवं अंध-परम्पराओं का भी वर्णन हुआ है। इसके उपदान के रूप में भूत-प्रेत, जादू-टोना, ताबीज, शगुन, मत्यु संबंधी अंधविश्वास आदि तत्व आते हैं। ग्रामीण-समाज के लिए अंधविश्वासों का इतना महत्व है कि वह जन-जन में रच-बस गया है। ''(वही पृ 0119) 'बाबा बटेसरनाथ' में पानी न बरसने पर इन्द्र को खुश करने के लिए तरह-तरह के उपक्रम किये गए हैं-

''मेरी इस छाया में बैठकर तेरी इस बस्ती रूपउली के ब्राहम्मणों ने मिट्टी के ग्यारह लाख शिवलिंग बनाए और उनकी सामूहिक पूजा की , फिर भी मेघ की कृपा नहीं हुई।.... ग्वालों, अहीरों और धानुकों ने यहीं चार दि नों तक भुइयाँ महाराज का पूजन किया , दस भेड़े बलि चढ़ाई और दो जवान भाव खेलते-खेलते लहुलुहान होकर गिर पड़े थे , फिर भी राजा इन्द्र खुश नहीं हुआ। ....एक रात मर्द जब सो गए तो गाँव भर की औरतें दस-पन्द्रह गुटों में बंट गई। तालाब से मेढक पकड़ लाए गए , उन्हें ओखलियों में मूसलों से कुचला गया। गीतों में बादल को बुलाती रही वे देर तक बुलाती रहीं, लेकिन मेघ नहीं आया। ..... पण्डितों ने महीनों तक चण्डीपाठ किए , साधकों ने एक-एक मन्त्र को लाखों जपा .... सब व्यर्थ। वरूण को दया नहीं आई।''(राय पृ027)

निष्कर्ष

उपर्युक्त समस्त विवरण इस बात की पुष्टि करते हैं कि नागार्जुन के कथा साहित्य में लोकतत्व की जो दर्शनीय छटा विद्यमान है , वह हिन्दी के अन्य कथाकारों में देख पाना संभव नहीं है , नागार्जुन जमीन से जुड़े हुए कुछ ऐसे कथाकार हैं , जिन्होंने ग्रामीण संस्कृति और उसकी विशेषताओं के लिए एक विस्तृत फलक तैयार कर अपनी रचनाओं को जीवन्तता प्रदान की है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

शोभाकान्त (संपा0) नागार्जुन सम्पूर्ण उपन्यास-1

भ्रमर, डॉ0 रवीन्द्र (1965) हिन्दी भक्ति-साहित्य में लोकतत्व,

श्रीवास्तव, परमानन्द (संपा 0) नागार्जुन मूल्यांकन पुनर्मूल्यांकन (नीलम सिंह के लेख से)

राय, डॉ0 विवेकी, स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी कथा साहित्य और ग्राम्यजीवन,

राय, आशुतोष, नागार्जुन का गद्य साहित्य,

सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति-विशेषांक, सं0 2010

नागार्जुन, बाबा बटेसरनाथ,

नागार्जुन, बलचनमा, नागार्जुन,

नागार्जुन, नई पौध,

नागार्जुन, रतिनाथ की चाची,

नागार्जुन वरूण के बेटे,

गुंजन, रामनिहाल, नागार्जुनः रचना प्रसंग और दृष्टि

Corresponding Author

अंजलि श्योकंद*

Email - sehwaganjali@gmail.com

www.ignited.in